वेदोऽखिलोधर्ममूलम्

ऋग्वेद
यजुर्वेद
सामवेद
अथर्ववेद

वैद प्रकाश

मासिक पत्र (6-7 प्रतिमाह) मूल्यः ५ रुपये (३०/-वार्षिक) मई २०१८

कुल पृष्ठ संख्या २०, वजनः 40 ग्राम
प्रकाशन तिथिः 4 मई 2018

अन्तःपथ

मलों को दूर कर मधुर और क्रियाशील बनें *–डॉ. अशोक आर्य*	३ से ५
नास्तिकता भी एक अन्धविश्वास है *–डॉ. विवेक आर्य*	५ से १२
हृदय परिवर्तन	१२ से १४
संसारभर के विकासवादियों से प्रश्न *–आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक, वैदिक वैज्ञानिक* अध्यक्ष, श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास	१४ से १७

वेदों की स्वर्णिम सूक्तियाँ

उस मार्ग पर चलो जिस मार्ग
पर सज्जन चलते हैं।
उद्दण्डता और अनीति के मार्ग पर
चलने वाला दुःख पाता है।

–अथर्व. 19/59/3

ॐ देवानामपि पन्थामगन्म।

लोभी न लोक का न परलोक का

एक नगर में एक महात्मा कथा किया करते थे। महात्मा बड़े प्रसिद्ध और तेजस्वी थे। उनके सत्संग के लिए बड़े-बड़े धनी, सेठ-सर्राफ जाया करते थे। वहाँ के राजा को जब पता लगा तब वह भी जाने लगा। प्रतिदिन हाथ जोड़कर महात्मा से प्रार्थना करता–'कोई सेवा स्वीकार करें' परन्तु महात्मा त्यागी होने के कारण कह देते, 'कोई इच्छा नहीं।' राजा अपनी धन-सम्पत्ति की बड़ी प्रशंसा किया करता और बड़ी श्रद्धा प्रकट करता। एक दिन महात्मा ने उसकी परीक्षा करनी चाही। कथा हो चुकने के बाद महात्मा ने एक सर्राफ को बिठा लिया और कहा कि हमको आज रात एक हीरा जिसका मूल्य 60 हजार हो, चाहिए। कल तुमको लौटा देंगे। 'यदि हमारे ऊपर विश्वास हो तो ला दो। नहीं तो खैर...।' सर्राफ ने कहा–'भगवन्! ला दूँगा। यदि आपने किसी को देना भी हो तो दे दें। मेरा तो इससे अधिक क्या सौभाग्य हो सकता है जब मेरी भेंट आपसे स्वीकार हो जाए।' सर्राफ रात्रि समय आज्ञानुसार हीरा लाया। महात्मा ने हीरा लेकर, उसे विदा कर दिया, और उसे एक फटे पुराने चमड़े में लगा–कुत्ते के गले में बाँध दिया। कुत्ता महात्मा की कुटिया में रहने वाला था। प्रातः सत्संग लगा, सब लोग आए और बैठ गए। थोड़ी देर बाद राजा भी आ गया। राजा को बैठते ही विचित्र चमक दिखाई देने लगी। देखा तो कुत्ते के गले में हीरा बँधा हुआ है। मन में विचार किया कि महात्मा भी कैसे भोलेभाले होते हैं। किसी भक्त ने इतना हजारों रुपये का हीरा भेंट किया, और ये ऐसे बेपरवाह हैं कि कुत्ते के गले में बाँध दिया। हो न हो किसी युक्ति से उड़ा लूँ। अब सत्संग शुरू है, सुन्दर उपदेश हो रहा है, अब सबका रुख महात्मा के मुख की ओर है और राजा का कुत्ते की ओर। महात्मा भी ताड़ रहे हैं। जब सत्संग समाप्त हुआ, राजा आगे तो सबसे पहले चला जाता था, आज सब चले गये, परन्तु राजा बैठे हैं।

राजा–'भगवन्! आपके कुत्ते के गले में पट्टा चमड़े का बहुत पुराना है, फटा है। आज ही मेरी दृष्टि पड़ी है। आज्ञा हो तो ले जाऊँ, नया डलवा दूँ।'

महात्मा–'नहीं! यही ठीक है। हमने क्या करना है।'

राजा–'महाराज को तो जरूरत नहीं। पर महात्माओं के कुत्ते के गले में ऐसा गन्दा चमड़ा हो, अच्छा नहीं लगता। जबकि आपके भक्त बड़े-बड़े सेठ साहूकार हों, राजा महाराजा हों। हम लोगों की तो मानहानि है!'

महात्मा–कुत्ता पशु है। उसे ज्ञान नहीं और लोभ नहीं, चाहे उसके गले में फटा चमड़ा हो, चाहे सोने की जंजीर, उसे तो दोनों भार हैं। वह तो इससे भी आजादी माँगता है।'

राजा–'तो भगवन्! पट्टा मुझे ही दे दीजिए।'

महात्मा–'तुम राजा होकर, कुत्ते के गन्दे पट्टे को लेकर क्या करोगे?'

राजा–'मेरे लिए तो तावीज होगा। अपने पास स्मृति स्वरूप रखूँगा। मुझे बड़ा प्यारा लग रहा है। मेरा मन इसकी ओर खिंचा चला जाता है।'

महात्मा–'इस पट्टे को वही ले जा सकता है जो इस कुत्ते के साथ खा सकता है।'

राजा ने इधर-उधर नज़र दौड़ाई। देखा, खड़ा तो कोई नहीं, खा लूँ। हीरा तो मिल जाएगा!

महात्मा ने दूध मँगाया और उसमें रोटी टुकड़े-टुकड़े करके भिगो दी। कुत्ते के आगे रख–राजा से कहा, 'खाओ'।

जब राजा ने हाथ बढ़ाया, तब महात्मा ने हाथ पकड़ लिया। कहा–'शोक! राजा होकर हीरे के लोभ में कुत्ते के साथ कुत्ता बनना चाहता है? तू तो अपने धन-राज्य की बड़ी प्रशंसा किया करता था। यही तेरी सम्पत्ति है? इतना गरीब है कि कुत्ते के साथ खाना...उफ!'

राजा बड़ा लज्जित हुआ। महात्मा ने हीरा सर्राफ को दे दिया।

दृष्टान्त–लोभ ईमान धर्म से गिरा देता है।

वेदप्रकाश

संस्थापक : **स्वर्गीय श्री गोविन्दराम हासानन्द**

वर्ष ६७ अंक १० वार्षिक मूल्य : तीस रुपये, एक प्रति ५ रुपये, मई, २०१८

सम्पा॰ **अजयकुमार** पूर्व सम्पादक : स्व॰ **स्वामी जगदीश्वरानन्द सरस्वती**

ओ३म्

मलों को दूर कर मधुर और क्रियाशील बनें

—डॉ अशोक आर्य

पॉकेट 1.61 एफ. रामप्रस्थ ग्रीन से. 7

वैशाली 201010 गाजियाबाद उ. प्र. भारत

जिन जलों से रस का संचार हो, ऐसी औषधियों के प्रयोग से हम अपने अन्दर व बाहर के मालिन्य को नष्ट कर अति क्रियाशील व मधुर बने। यजुर्वेद के प्रथम अध्याय का यह इक्कीसवाँ मन्त्र इस तथ्य पर प्रकाश डालते हुए इस प्रकार उपदेश करता है:—

देवस्य त्वा सवितुः प्रसवेऽश्विनोर्बाहुभ्यां पूष्णो हस्ताभ्याम्।
सं वपामि समापऽओषधीभिः समोषधयो रसेन।
सं रेवतीर्जगतीभिः पृच्यन्ताः सं मधुमतीर्मधुमतीभिः पृच्यन्ताम्।।

।।यजुर्वेद १.२१।।

धान्य अर्थात् वनस्पतीय भोजन जीवन को सुन्दर बनाता है किन्तु इस का प्रयोग कैसे किया जावे? इस सम्बन्ध में प्रकाश डालते हुए मन्त्र कहता है कि:

1. पोषण व प्राणार्थ वनस्पतियों का सेवन करः—

हे धान्य! मैं तेरा प्रयोग करता हूँ। मैं तेरा प्रयोग उस प्रभु की आज्ञा से करता हूँ, जो प्रभु दिव्य गुणों का पुन्ज है, जो प्रभु दिव्य गुणों का, उत्तम गुणों का भण्डार है। मैं तेरा प्रयोग उस प्रभु की अनुज्ञा में, आदेश में कर रहा हूँ। प्रभु की अनुज्ञा है, इसलिए मैं तेरा उपभोग कर रहा हूँ किन्तु यह उपभोग न तो मैं अपनी आवश्यकता से कम करता हूँ तथा न ही अधिक करता हूँ अपितु मुझे जितनी आवश्यकता है, उसके अनुरूप मैं तेरा उपभोग यथायोग्य के आधार पर करता हूँ।

इस से स्पष्ट होता है कि मानव को उतना ही खाना चाहिये

जितना उसके पेट में समा सके। यदि वह अधिक खाता है तो उसके स्वास्थ्य का नाश हो जाता है तथा अनेक प्रकार की व्याधियों का कारण बनता है और यदि कम खाता है तो भी अवस्था कुछ वैसी ही बन जाती है। एक अन्य मन्त्र, **"ईशा वास्यं इदम सर्वं यत्किन्च जगत्याम जगत्। तेन त्यक्तेन भुंजीथा मा ग्रधः कस्यस्विद् धनम्॥"** में भी इस बात को ही समझाते हुए कहा है कि हे मनुष्य! जिस प्रभु ने इस जगत् की रचना की है, उस प्रभु ने तेरे लिए बहुत सी वनस्पतियाँ भी बनाई हैं। तू इन वनस्पतियों का उपभोग उतना ही कर, जितना तेरे लिए आवश्यक है। शेष अन्यों के लिए छोड़ दे, लालच मत कर, इनका संग्रह मत कर।

मन्त्र ने यह ही सन्देश दिया है कि हे जीव! तू यथा योग्य आवश्यकता के अनुसार इस का प्रयोग कर। इसे पूषा के द्वारा, इसे प्राणापानों के हाथों प्राप्त कर अर्थात् तू इन का प्रयोग संग्रह के लिए न कर, इसका प्रयोग जिह्वा के स्वाद के लिए न कर बल्कि इसका प्रयोग अपने पोषण के लिए कर, अपने जीवन के लिए कर, अपने प्राण तथा अपान को नियमित संचालित करने के लिए कर।

2. हम मधुर व क्रियाशील बनें:–

मन्त्र इस बात को आगे बढ़ाते हुए इसके दूसरे बिन्दु पर प्रकाश डालते हुए कहता है कि हे प्राणी! जिन ओषधियों का, जिन वनस्पतियों का तू प्रयोग करता है, उनका उत्तम तथा गुणवत्ता वाला होना आवश्यक होता है। इसलिए तू इन का उत्पादन करते समय, इन्हें धरती में बोते समय, इनका बीज उत्तम डालना, इसमें उत्तम उर्वरकों तथा उत्तम जलों का प्रयोग करना। जो ओषधियाँ वर्षा के जल से सिंचित होती हैं, उनकी गुणवत्ता दूसरे से अधिक होती है क्योंकि इनकी गुणवता उत्तम जल के कारण उत्तम हो जाती है। इनमें सात्विकता कहीं अधिक होती है। जिन में गन्दा जल डाला जाता है, वह औषध तामसी बन जाती है तथा इनके प्रयोग से तामसी गुणों का जन्म होता है।

मन्त्र आगे बताता है कि उत्तम जलों से सिंचित इन औषध में सुन्दर रसों की प्रचुरता होती है। यह संगत रसों से भरी होती हैं। इस प्रकार की ओषधियाँ शक्ति–वर्धक गुणों से भरी होती हैं, यह इस कारण धनवान् मानी जाती हैं। इस प्रकार यह गतिशील प्राणी के साथ मिल जाती हैं तथा उसे और भी अधिक गतिशील बना देती हैं। इन औषध का सेवन करने वाला प्राणी स्वस्थ हो कर अत्यधिक पुरुषार्थी

हो जाता है, अत्यधिक मेहनत करने लगता है। इन औषध में जिस मधुर रस का संचार हो रहा होता है, इनके सेवन से वह मधुर रस इसे सेवन करने वाले व्यक्ति के अन्दर प्रवेश कर जाता है। इस से वह प्राणी भी मधुर व्यवहार वाले बन जाते हैं। ऐसे मधुर बने प्राणी के सम्पर्क में जो भी आता है, वह भी मधुर बनता चला जाता है।

इस प्रकार इस मन्त्र के आधार पर हम कह सकते हैं कि जिस वनस्पति का हम ने सेवन करना है, उसका रोपण उत्तम बीज से हो, उत्तम प्रकार की उर्वरक इस में डालें, इसमें उत्तम तथा शुद्ध जल का ही प्रयोग किया जावे। इस विविध से पैदा किये गये अन्न का उपभोग करने से सात्विक रस की उत्पति होने से तामसिक वृत्ति नहीं आने पावेगी। इस प्रकार की बुद्धि से बचते हुए हम सात्विक बुद्धि वाले बनकर पुरुषार्थी तथा मधुर स्वभाव वाले बनेंगे।

नास्तिकता भी एक अन्धविश्वास है

–डॉ. विवेक आर्य

हिंदुस्तान टाइम्स अखबार के 4 जनवरी, 2015 के अंक में "The Rise of Reason" के नाम से लेख प्रकाशित हुआ। इस लेख का आशय यह दिखाना था कि तर्क के युग का आरम्भ हो चुका है और लोग धर्म का त्याग कर अपने आपको नास्तिक कहलाने में गर्व महसूस करते हैं। इस लेख में यह भी दिखाया गया है कि सन् 2005 में हमारे देश में 81 प्रतिशत लोग आस्तिक थे जो 2012 में 6 प्रतिशत की दर से घट कर 75 प्रतिशत हो गया है। यह भी दर्शाने का प्रयास किया गया है कि विश्व में तर्कवादी बड़ी संख्या में बढ़ रहे हैं और ये वह लोग हैं जिनके समक्ष धर्म तर्क की कसौटी पर खड़ा नहीं रह पा रहा है। इस लेख के माध्यम से हम सत्य को जानने का प्रयास करेंगे कि क्या धर्म को मानने वाले आस्तिकों का उद्देश्य ठीक है अथवा तर्क के द्वारा धर्म को न मानने वाले नास्तिकों का उद्देश्य ठीक है।

नास्तिक बनने के मुख्य क्या-क्या कारण हैं?

नास्तिक बनने के प्रमुख कारण हैं–

1. ईश्वर के गुण, कर्म और स्वभाव से अनभिज्ञता।
2. धर्म के नाम पर अन्धविश्वास जिनका मूल मत-मतान्तर की संकीर्ण सोच है।
3. विज्ञान द्वारा करी गई कुछ भौतिक प्रगति को देखकर अभिमान होना।

4. धर्म के नाम पर दंगे, युद्ध, उपद्रव आदि।

ईश्वर के नाम पर अत्याचार, अज्ञानता को बढ़ावा देना, चमत्कार आदि में विश्वास दिलाना, ईश्वर को एकदेशीय अर्थात् एक स्थान जैसे मंदिर, मस्जिद आदि अथवा चौथे अथवा सातवें आसमान तक सीमित करना, ईश्वर द्वारा अवतार लेकर विभिन्न लीला करना, एक के स्थान पर अनेक ईश्वर होना, निराकार के स्थान पर साकार ईश्वर होना, ईश्वर के द्वारा अज्ञानता का प्रदर्शन करना आदि कुछ कारण हैं। जो एक निष्पक्ष व्यक्ति को भी यह सोचने पर मजबूर कर देते हैं कि क्या ईश्वर का अस्तित्व है कि नहीं अथवा ईश्वर मनुष्य के मस्तिष्क की कल्पना मात्र है। उदाहरण के तौर पर हिन्दू समाज में शूद्रों को मंदिरों में प्रवेश की मनाही है एवं अगर कोई शूद्र मंदिर में प्रवेश कर भी जाये तो उसे दंड दिया जाता है और मंदिर को पवित्र करने का ढोंग किया जाता है। यह सब पाखंड किया तो ईश्वर के नाम पर जाता है मगर इसके पीछे मूल कारण मनुष्य का स्वार्थ है नाकि ईश्वर का अस्तित्व है।

ईश्वर गुण, कर्म और स्वभाव से दयालु एवं न्यायकारी है इसलिए वह किसी भी प्राणिमात्र में कोई भेदभाव नहीं करते। ईश्वर गुणों से सर्वव्यापक एवं निराकार है अर्थात् सभी स्थानों पर है और आकार रहित भी है। जब ईश्वर सभी स्थानों पर है तो फिर उन्हें केवल मंदिर में या क्षीर सागर पर या कैलाश पर या चौथे आसमान पर या सातवें आसमान पर ही क्यों मानें। इससे यही सिद्ध होता है कि मनुष्य ने अपनी कल्पना से पहले ईश्वर को निराकार से साकार किया, उन्हें सर्वदेशीय अर्थात् सभी स्थानों पर निवास करने वाला से एकदेशीय अर्थात् एक स्थान पर सीमित कर दिया। फिर सीमित कर कुछ मनुष्यों ने अपने आपको ईश्वर का दूत, ईश्वर और आपके बीच मध्यस्थ, ईश्वर तक आपकी बात पहुँचाने वाला बना डाला। यह जितना भी प्रपंच ईश्वर के नाम पर रचा गया यह इसीलिए हुआ क्यूँकि हम ईश्वर के निराकार गुण से परिचित नहीं हैं। अपनी अंतरात्मा के भीतर निराकार एवं सर्वव्यापक ईश्वर को मानने से न मंदिर की, न मूर्ति की, न मध्यस्थ की, न दूत की, न अवतार की, न पैगम्बर की और न ही किसी मसीहा की आवश्यकता है।

ईश्वर के नाम पर सबसे अधिक भ्रांतियाँ मध्यस्थ बनने वाले लोगों ने फैलाई हैं चाहे वह छुआ-छूत का समर्थन करने वाले एवं शूद्रों को मंदिरों में प्रवेश न देने वाले हिन्दू धर्म के पुजारी हों, चाहे इस्लाम

से सम्बन्ध रखने वाले मौलवी-मौलाना हो जिनके उकसाने के कारण इतिहास में मुस्लिम हमलावरों ने मानव जाति पर धर्म के नाम पर ऐसा कोई भी अत्याचार नहीं था जो उन्होंने नहीं किया था, चाहे ईसाई समाज से सम्बंधित पोप आदि हों जिन्होंने चर्च के नाम पर हजारों लोगों को जिन्दा जला दिया एवं निरीह जनता पर अनेक अत्याचार किये। न यह मध्यस्थ होते न ईश्वर के नाम पर इतने अत्याचार होते और न ही इस अत्याचार के फलस्वरूप प्रतिक्रिया रूप में विश्व के एक बड़े समूह को ईश्वर के अस्तित्व को अस्वीकार कर नास्तिकता का समर्थन करना पड़ता। सत्य यह है यह प्रतिक्रिया इस व्याधि का समाधान नहीं थी अपितु इसने रोग को और अधिक बढ़ा दिया। आस्तिक व्यक्ति यथार्थ में ईश्वर विश्वासी होने से पापकर्म में लीन होने से बचता था। दोष मध्यस्थों का था जो आस्तिकों का गलत मार्गदर्शन करते थे। मगर ईश्वर को त्याग देने से पाप-पुण्य का भेद मिट गया और पाप कर्म अधिक बढ़ता गया, नैतिक मूल्यों को ताक पर रख दिया गया एवं इससे विश्व अशांति और अराजकता का घर बन गया।

ईश्वर में अविश्वास का एक बड़ा कारण अन्धविश्वास है। सामान्य जन विभिन्न प्रकार के अंधविश्वासों में लिप्त हैं और उन अंध विश्वासों का नास्तिक लोग कारण ईश्वर को बताते हैं। सत्य यह है कि ईश्वर ज्ञान के प्रदाता हैं अज्ञान को बढ़ावा देने का मुख्य कारण मनुष्य का स्वार्थ है। अपनी आजीविका, अपनी पदवी, अपने नाम को सिद्ध करने के लिए अनेक धर्म गुरु अपने-अपने ढंग से अपनी-अपनी दुकान चलाते हैं। कोई झाड़-फूँक से, कोई गुरुमंत्र से, कोई गुरु के नाम स्मरण से, कोई गुरु की आरत से, कोई गुरु की समाधि आदि से जीवन के सभी दुःखों का दूर होना बताता है, कोई गंडा तावीज़ पहनने से आवश्यकताओं की पूर्ति बताता है, कुछ लोग और आगे बढ़कर अंधे हो जाते हैं और कोई-कोई निस्संतान संतान प्राप्ति के लिए पड़ोसी के बच्चे की नरबलि देने तक से नहीं चूकता है। विडंबना यह है कि इन मूर्खों के क्रियाकलापों को दिखा-दिखा कर अपने आपको तर्कशील कहने वाले लोग नास्तिकता को बढ़ावा देते हैं। कोई भी अन्धविश्वास वैज्ञानिक प्रयोगों से सिद्ध नहीं हो सकता इसलिए नास्किता को प्रोत्साहन वालों द्वारा विज्ञान का सहारा लेकर नास्तिकता का प्रचार करना भी एक प्रकार से अन्धविश्वास को मिटाने के स्थान पर एक और अन्धविश्वास को बढ़ावा देना ही है।

चमत्कार में विश्वास अन्धविश्वास की उत्पत्ति का मूल है। आस्तिक समाज में मुसलमान पैगम्बरों की चमत्कार की कहानियों में अधिक विश्वास रखते हैं, ईसाई समाज में ईसा मसीह और संतों के नाम पर चमत्कार की दुकानें चलाई जाती हैं। हिन्दू समाज में चमत्कार पुराणों में लिखी देवी-देवताओं की कहानियों से लेकर गुरुडम की दुकानों तक फल-फूल रहा है। इन सभी का यह मानना है कि ईश्वर सब कुछ कर सकता है। स्वामी दयानंद सत्यार्थ प्रकाश में इस दावे की परीक्षा करते हुए लिखते हैं कि अगर ईश्वर सब कुछ कर सकता है तो क्या ईश्वर अपने आपको मार भी सकता है? क्या ईश्वर अपने जैसा एक और ईश्वर बना सकता है जिसके गुण-कर्म और स्वभाव उसी के समान हो। इसका उत्तर स्पष्ट है नहीं। फिर ईश्वर सब कुछ कैसे कर सकता है? इस शंका का समाधान यह है कि जो-जो कार्य ईश्वर के हैं जैसे सृष्टि की उत्पत्ति, पालन-पोषण, प्रलय, मनुष्य आदि का जन्म-मरण, पाप-पुण्य का फल देना आदि कार्य करने में ईश्वर स्वयं सक्षम है उन्हें किसी की आवश्यकता नहीं है। नास्तिक लोग आस्तिकों की चमत्कार के दावों की परीक्षा लेते हुए कहते हैं कि सृष्टि को नियमित मानते हो अथवा अनियमित। चमत्कार नियमों का उल्लंघन है। अगर ईश्वर की बनाई सृष्टि को अनियमित मानते हो तो उसे बनाने वाले ईश्वर को भी अनियमित मानना पड़ेगा। जो कि असंभव है। इसलिए चमत्कार को मनुष्य के मन की स्वार्थ वश कल्पना मानना सत्य को मानने के समान है। न इससे ईश्वर का नियमित होने का खंडन होगा और न ही अन्धविश्वास को बढ़ावा मिलेगा।

नास्तिकता को बढ़ावा देने में एक बड़ा दोष अभिमान का भी है। भौतिक जगत में मनुष्य ने जितनी भी वैज्ञानिक उन्नति की है उस पर वह अभिमान करने लगता है और इस अभिमान के कारण अपने आपको जगत की सबसे बड़ी सत्ता समझने लगता है। एक उदाहरण लीजिये सभी यह मानते हैं कि न्यूटन ने Gravitation अर्थात् गुरुत्वाकर्षण के सिद्धांत की खोज की थी। क्या न्यूटन से पहले गुरुत्वाकर्षण की शक्ति नहीं थी? थी मगर मनुष्य को उसका ज्ञान नहीं था अर्थात् न्यूटन ने केवल अपनी अल्पज्ञता को दूर किया था और इसी क्रिया को आविष्कार कहा जाता है। सत्य यह है की जितनी भी भौतिक वैज्ञानिक उन्नति हैं वह अपनी अल्पज्ञता को दूर करना है। मनुष्य चाहे कितनी भी उन्नति क्यों न कर ले वह ज्ञान की सीमा को

कभी प्राप्त नहीं कर सकता क्यूँकि एक तो मनुष्य की शक्तियाँ सीमित हैं जबकि ज्ञान की असीमित हैं दूसरी असीमित ज्ञान का ज्ञाता केवल एक ही है और वो है ईश्वर जिनमें न केवल वो ज्ञान भी पूर्ण है जो केवल मानव के लिए है अपितु वह ज्ञान भी है जो मानव से परत केवल ईश्वर के लिए है।

स्वयं न्यूटन की इस सन्दर्भ में धारणा कितनी प्रासंगिक है–

"I do not know what I may appear to the world, but to myself I seem to have been only like a boy playing on the sea-shore, and diverting myself in now and then finding a smoother pebble or a prettier shell than ordinary, whilst the great ocean of truth lay all undiscovered before me."

न्यूटन ने हमारी अवधारणा का समर्थन कर अपनी निष्पक्षता का परिचय दिया है।

अब प्रश्न यह है कि धर्म और विज्ञान में क्या सम्बन्ध है और क्यूँकि नास्तिक लोगों का यह मत है कि धर्म और विज्ञान एक–दूसरे के शुत्र हैं। नास्तिक लोगों की इस सोच का मुख्य कारण यूरोप के इतिहास में चर्च द्वारा बाइबिल के मान्यताओं पर वैज्ञानिकों द्वारा शंका करना और उनकी आवाज़ को सख्ती से दबा देना था। उदाहरण के लिए गैलिलियो को इसलिए मार डाला गया क्यूँकि उसने कहा था कि पृथ्वी सूर्य के चारों और भ्रमण करती है जबकि चर्च की मान्यता इसके विपरीत थी। चर्च ने वैज्ञानिकों का विरोध आरम्भ कर दिया और उन्हें सत्य को त्याग कर जो बाइबिल में लिखा था उसे मानने को मजबूर किया और न मानने वालो को दण्डित किया गया। इस विरोध का यह परिणाम निकला कि यूरोप से निकलने वाले वैज्ञानिक चर्च को अर्थात् धर्म को विज्ञान का शत्रु मानने लग गए और उन्होंने ईश्वर की सत्ता को नकार दिया। दोष चर्च के अधिकारियों का था नाम ईश्वर का लगाया गया। यह विचार परम्परा रूप में चलता आ रहा है और इस कारण से वैज्ञानिक अपने आपको नास्तिक कहते हैं।

अब प्रश्न यह उठता है कि धर्म और विज्ञान में क्या सम्बन्ध है? इसका उत्तर है कि "Religion and Science are not against each other but they are allies to each other" अर्थात् धर्म और विज्ञान एक–दूसरे के विरोधी नहीं अपितु सहयोगी हैं। जैसे विज्ञान यह बताता है की जगत कैसे बना है जबकि धर्म यह बताता है की जगत क्यूँ बना है।

जैसे मनुष्य का जन्म कैसे हुआ यह विज्ञान बताता है जबकि मनुष्य का जन्म क्यूँ हुआ यह धर्म बताता है।

भौतिक विज्ञान के लिए आध्यात्मिक शंकाओं का समाधान करना असंभव है मगर इनका समाधान धर्म द्वारा ही संभव है। धर्म और विज्ञान दोनों एक दूसरे के सहयोगी हैं और इसी तथ्य को आइंस्टीन ने सुन्दर शब्दों में इस प्रकार से कहा है–

"Science without religion is a lame and religion without science is blind."

विज्ञान धर्म के मार्गदर्शन के बिना अधूरा है और सत्य धर्म विज्ञान के अनुकूल है, अन्धविश्वास अवैज्ञानिक होने के कारण त्याग करने योग्य है।

एक कुतर्क यह भी दिया जाता है कि अगर ईश्वर है तो उन्हें वैज्ञानिक प्रयोगों से सिद्ध करके दिखाएँ। इसका समाधान वायु के अतिरिक्त मन, बुद्धि, सुख, दुःख, गर्मी, सर्दी, काल, दिशा, आकाश ये सभी निराकार हैं। क्या ये सभी वैज्ञानिक प्रयोगों से सिद्ध होते हैं? नहीं। परन्तु फिर भी इनका अस्तित्व माना जाता है फिर केवल ईश्वर को लेकर यह शंका उठाना नास्तिकता का समर्थन करने वाले की निष्पक्षता पर प्रश्न उठाता है। सत्य यह है कि वैज्ञानिक प्रयोगों से ईश्वर की सत्ता को सिद्ध न कर पाना आधुनिक विज्ञान की कमी है जबकि आध्यात्मिक वैज्ञानिक जिन्हें हम ऋषि कहते हैं चिरकाल से निराकार ईश्वर को न केवल अपनी अंतरात्मा में अनुभव करते आ रहे हैं अपितु जगत के कण-कण में भी विद्यमान पाते हैं।

दंगे, युद्ध, उपद्रव आदि का दोष ईश्वर को देना एक और मूर्खता है। यह पहले ही स्पष्ट किया जा चुका है कि दंगे, उपद्रव आदि मज़हब या मत-मतान्तर आदि को मानने वालों के स्वार्थ के कारण होता है ना कि धर्म के कारण होता है। एक उदाहरण लीजिये 1947 से पहले हमारे देश में अनेक दंगे हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच में हुए थे। इन दंगों का मुख्य कारण यह बताया जाता था कि हिन्दुओं के धार्मिक जुलूस के मस्जिद के सामने से निकलने से मुसलमानों की नमाज़ में विघ्न पड़ गया जिसके कारण यह दंगे हुए। मेरा स्पष्ट प्रश्न है कि जो व्यक्ति ईश्वर की उपासना या नमाज़ में लीन होगा उसके सामने चाहे बारात भी क्यों न निकल जाये। उसे मालूम ही नहीं चलेगा परन्तु जो व्यक्ति यह बाट जोह रहा हो कि कब हिन्दुओं का जुलूस

आये कब हम नमाज़ आरम्भ करें और कब दंगा हो। तो इसका दोष ईश्वर को देना कहाँ तक उचित है? संसार में जितनी भी हिंसा ईश्वर के नाम पर होती है उसका मूल कारण स्वार्थ है ना कि धर्म है।

नास्तिक लोग धर्म की मूलभूत परिभाषा से अनभिज्ञ हैं और मत-मतान्तर की संकीर्ण सोच एवं अन्धविश्वास को धर्म समझकर उसकी तिलांजलि दे देते हैं। धर्म संस्कृत भाषा का शब्द है जोकि धारण करने वाली धृ धातु से बना है। "धार्यते इति धर्म:" अर्थात् जो धारण किया जाये वह धर्म है। अथवा लोक परलोक के सुखों की सिद्धि के हेतु सार्वजनिक पवित्र गुणों और कर्मों का धारण व सेवन करना धर्म है। दूसरे शब्दों में यह भी कह सकते हैं की मनुष्य जीवन को उच्च व पवित्र बनाने वाली ज्ञानानुकूल जो शुद्ध सार्वजनिक मर्यादा पद्धति है वह धर्म है। धैर्य, क्षमा, मन को प्राकृतिक प्रलोभनों में फँसने से रोकना, चोरी का त्याग, शौच अर्थात् पवित्रता, इन्द्रियों का निग्रह अर्थात् उन्हें वश में करना, बुद्धि अथवा ज्ञान, विद्या, सत्य और अक्रोध ये धर्म के दस लक्षण हैं। सदाचार परम धर्म है।

अन्धविश्वास मत-मतान्तर की संकीर्ण सोच है। उसे धर्म समझना अन्धविश्वास है। धर्म का आचरण से सम्बन्ध है। मत का सम्बन्ध आचरण से नहीं अपितु मान्यता से है। मान्यता सही भी हो सकती है गलत भी हो सकती है। इसलिये मत को धर्म समझना गलत है।

ईश्वर में विश्वास रखने के निम्नलिखित लाभ हैं।

1. आदर्श शक्ति में विश्वास से जीवन में दिशा निर्धारण होता है।

2. सर्वव्यापक एवं निराकार ईश्वर में विश्वास से पापों से मुक्ति मिलती है।

3. ज्ञान के उत्पत्तिकर्ता में विश्वास से ज्ञान प्राप्ति का संकल्प बना रहता है।

4. सृष्टि के रचनाकर्ता में विश्वास से ईश्वर की रचना से प्रेम बढ़ता है।

5. अभयता, आत्मबल में वृद्धि, सत्य पथ का अनुगामी बनना, मृत्यु के भय से मुक्ति, परमानन्द सुख की प्राप्ति, आध्यात्मिक उन्नति, आत्मिक शांति की प्राप्ति, सदाचारी जीवन आदि गुण की आस्तिकता से प्राप्ति होती है।

6. स्वार्थ, पापकर्म, अत्याचार, दु:ख, राग, द्वेष, ईर्ष्या, अहंकार आदि दुर्गुणों से मुक्ति मिलती है।

तार्किक होना गलत नहीं है। ऋषि दयानंद 19वीं सदी के सबसे बड़े तार्किक थे मगर वह पूर्णरूप से आस्तिक थे। दर्शनों में तर्क को ऋषि कहा गया है। बशर्ते तर्क का प्रयोजन सत्य को ग्रहण करना एवं असत्य का त्याग हो। तर्क का नाम लेकर धर्म का बहिष्कार कर भोगवादी होने के बहाने बनाना अपने आपको अँधेरे में रखने के समान है। नास्तिकता अपने आप में अन्धविश्वास है। अगर किसी व्यक्ति के पैर में फोड़ा निकला हो तो उसका ईलाज करना चाहिये न कि पैर काट देना चाहिये। नास्तिकता इसी प्रकार का पाखण्ड है। धर्म के नाम पर किये जाने वाले पाखंड को देखकर पाखंड के त्याग के स्थान पर धर्म का बहिष्कार करना नास्तिकता रूपी अन्धविश्वास मात्र है।

हृदय परिवर्तन

एक राजा को राज भोगते हुए काफी समय हो गया था। बाल भी सफेद होने लगे थे। एक दिन उसने अपने दरबार में एक उत्सव रखा और अपने गुरुदेव एवं मित्र देश के राजाओं को भी सादर आमन्त्रित किया। उत्सव को रोचक बनाने के लिए राज्य की सुप्रसिद्ध नर्तकी को भी बुलाया गया।

राजा ने कुछ स्वर्ण मुद्रायें अपने गुरु जी को भी दीं, ताकि यदि वे चाहें तो नर्तकी के अच्छे गीत व नृत्य पर वे उसे पुरस्कृत कर सकें। सारी रात नृत्य चलता रहा। ब्रह्म मुहूर्त की बेला आयी। नर्तकी ने देखा कि मेरा तबले वाला ऊँघ रहा है, उसको जगाने के लिए नर्तकी ने एक दोहा पढ़ा–

"बहु बीती, थोड़ी रही, पल पल गयी बिताय।
एक पलक के कारने, क्यों कलंक लग जाय।"

अब इस दोहे का अलग-अलग व्यक्तियों ने अपने अनुरूप अलग-अलग अर्थ निकाला। तबले वाला सतर्क होकर बजाने लगा।

जब यह बात गुरु जी ने सुनी तो उन्होंने सारी मोहरें उस नर्तकी के सामने फेंक दीं।

वही दोहा नर्तकी ने फिर पढ़ा तो राजा की लड़की ने अपना नवलखा हार नर्तकी को भेंट कर दिया।

उसने फिर वही दोहा दोहराया तो राजा के पुत्र युवराज ने अपना मुकट उतारकर नर्तकी को समर्पित कर दिया।

नर्तकी फिर वही दोहा दोहराने लगी तो राजा ने कहा–"बस कर,

एक दोहे से तुमने वेश्या होकर भी सबको लूट लिया है।"

जब यह बात राजा के गुरु ने सुनी तो गुरु के नेत्रों में आँसू आ गए और गुरु जी कहने लगे–"राजा! इसको तू वेश्या मत कह, ये तो अब मेरी गुरु बन गयी है। इसने मेरी आँखें खोल दी हैं। यह कह रही है कि मैं सारी उम्र संयमपूर्वक भक्ति करता रहा और आखिरी समय में नर्तकी का मुज़रा देखकर अपनी साधना नष्ट करने यहाँ चला आया हूँ, भाई! मैं तो चला।" यह कहकर गुरु जी तो अपना कमण्डल उठाकर जंगल की ओर चल पड़े।

राजा की लड़की ने कहा–"पिता जी! मैं जवान हो गयी हूँ। आप आँखें बन्द किए बैठे हैं, मेरी शादी नहीं कर रहे थे और आज रात मैंने आपके महावत के साथ भागकर अपना जीवन बर्बाद कर लेना था। लेकिन इस नर्तकी ने मुझे सुमति दी है कि जल्दबाजी मत कर कभी तो तेरी शादी होगी ही। क्यों अपने पिता को कलंकित करने पर तुली है?"

युवराज ने कहा–"पिता जी! आप वृद्ध हो चले हैं, फिर भी मुझे राज नहीं दे रहे थे। मैंने आज रात ही आपके सिपाहियों से मिलकर आपका कत्ल करवा देना था। लेकिन इस नर्तकी ने समझाया कि पगले! आज नहीं तो कल आखिर राज तो तुम्हें ही मिलना है, क्यों अपने पिता के खून का कलंक अपने सिर पर लेता है। धैर्य रख।"

जब ये सब बातें राजा ने सुनी तो राजा को भी आत्म ज्ञान हो गया। राजा के मन में वैराग्य आ गया। राजा ने तुरन्त फैसला लिया–"क्यों न मैं अभी युवराज का राजतिलक कर दूँ।" फिर क्या था, उसी समय राजा ने युवराज का राजतिलक किया और अपनी पुत्री को कहा–"पुत्री! दरबार में एक से एक राजकुमार आये हुए हैं। तुम अपनी इच्छा से किसी भी राजकुमार के गले में वरमाला डालकर पति रूप में चुन सकती हो।" राजकुमारी ने ऐसा ही किया और राजा सब त्याग कर जंगल में गुरु की शरण में चला गया।

यह सब देखकर नर्तकी ने सोचा–"मेरे एक दोहे से इतने लोग सुधर गए, लेकिन मैं क्यूँ नहीं सुधर पायी?" उसी समय नर्तकी में भी वैराग्य आ गया। उसने उसी समय निर्णय लिया कि आज से मैं अपना बुरा धंधा बन्द करती हूँ और कहा कि "हे प्रभु! मेरे पापों के लिए मुझे क्षमा करना। बस, आज से मैं सिर्फ तेरा नाम सुमिरन करूँगी।"

समझ आने की बात है, दुनिया बदलते देर नहीं लगती। एक दोहे

की दो लाईनों से भी हृदय परिवर्तन हो सकता है। बस, केवल थोड़ा धैर्य रखकर चिन्तन करने की आवश्यकता है।

प्रशंसा से पिघलना नहीं चाहिए, आलोचना से उबलना नहीं चाहिए। नि:स्वार्थ भाव से कर्म करते रहें। क्योंकि इस धरा का, इस धरा पर, सब धरा रह जाएगा।

संसारभर के विकासवादियों से प्रश्न

–आचार्य अग्निव्रत नैष्ठिक, वैदिक वैज्ञानिक
अध्यक्ष, श्री वैदिक स्वस्ति पन्था न्यास

अभी हाल में केन्द्रीय मानव संसाधन विकास राज्यमंत्री माननीय डॉ. सत्यपालसिंह जी के इस कथन कि मनुष्य की उत्पत्ति बन्दर से नहीं हुई, सम्पूर्ण भारत के बुद्धिजीवियों में हलचल मच रही है। कुछ वैज्ञानिक सोच के महानुभाव इसे साम्प्रदायिक संकीर्णताजन्य रुढ़िवादी सोच की संज्ञा दे रहे हैं। मैं उन महानुभावों से निवेदन करता हूँ कि मंत्रीजी का यह विचार रूढ़िवादी नहीं बल्कि सुदृढ़ तर्कों पर आधारित वैदिक विज्ञान का ही पक्ष है। ऐसा नहीं है कि विकासवाद का विरोध कुछ भारतीय विद्वान् ही करते हैं अपितु अनेक यूरोपियन वैज्ञानिक भी इसे नकारते आये हैं। मैं इसका विरोध करने वाले संसारभर के विकासवादियों से प्रश्न करना चाहता हूँ। ये प्रश्न प्रारम्भिक हैं, इनका उत्तर मिलने पर और प्रश्न किये जायेंगे:–

शारीरिक विकास

1. विकासवादी अमीबा से लेकर विकसित होकर बन्दर पुन: शनै:-शनै मनुष्य की उत्पत्ति मानते हैं। वे बताएँ कि अमीबा की उत्पत्ति कैसे हुई?
2. यदि किसी अन्य ग्रह से जीवन आया, तो वहाँ उत्पत्ति कैसे हुई? जब वहाँ उत्पत्ति हो सकती है, तब इस पृथ्वी पर क्यों नहीं हो सकती?
3. यदि अमीबा की उत्पत्ति रासायनिक क्रियाओं से किसी ग्रह पर हुई, तब मनुष्य के शुक्राणु व अण्डाणु की उत्पत्ति इसी प्रकार क्यों नहीं हो सकती?
4. उड़ने की आवश्यकता होने पर प्राणियों के पंख आने की बात कही जाती है परन्तु मनुष्य जब से उत्पन्न हुआ, उड़ने हेतु हवाई जहाज बनाने का प्रयत्न करता रहा है, परन्तु उसके पंख क्यों नहीं

उगे? यदि ऐसा होता, तो हवाई जहाज के अविष्कार की आवश्यकता नहीं होती।

5. शीत प्रदेशों में शरीर पर लम्बे बाल विकसित होने की बात कही जाती है, तब शीत प्रधान देशों में होने वाले मनुष्यों के रीछ जैसे बाल क्यों नहीं उगे? उसे कम्बल आदि की आवश्यकता क्यों पड़ी?
6. जिराफ की गर्दन इसलिए लम्बी हुई कि वह धरती पर घास सूख जाने पर ऊपर पेड़ों की पत्तियाँ गर्दन ऊँची करके खाता था। जरा बताएँ कि कितने वर्ष तक नीचे सूखा और पेड़ों की पत्तियाँ हरी रहीं? फिर बकरी आज भी पेड़ों पर दो पैर रखकर पत्तियाँ खाती है, उसकी गर्दन लम्बी क्यों नहीं हुई?
7. बंदर के पूँछ गायब होकर मनुष्य बन गया। जरा कोई बताये कि बंदर की पूँछ कैसे गायब हुई? क्या उसने पूंछ का उपयोग करना बंद कर दिया? कोई बताये कि बन्दर पूँछ का क्या उपयोग करता है और वह उपयोग उसने क्यों बंद किया? यदि ऐसा ही है तो मनुष्य के भी नाक, कान गायब होकर छिद्र ही रह सकते थे। मनुष्य लाखों वर्षों से बाल और नाखून काटता आ रहा है, तब भी बराबर वापिस उगते आ रहे हैं, ऐसा क्यों?
8. सभी बंदरों का विकास होकर मानव क्यों नहीं बने? कुछ तो अमीबा के रूप में ही अब तक चले आ रहे हैं, और हम मनुष्य बन गये, यह क्या है?
9. कहते हैं कि सांपों के पहले पैर होते थे, धीरे-धीरे वे घिस कर गायब हो गये। जरा विचारों कि पैर कैसे गायब हुए, जबकि अन्य सभी पैर वाले प्राणियों के पैर बिल्कुल नहीं घिसे।
10. बिना अस्थि वाले जानवरों से अस्थि वाले जानवर कैसे बने? उन्हें अस्थियों की क्या आवश्यकता पड़ी?
11. बंदर व मनुष्य के बीच बनने वाले प्राणियों कीशृंखला कहाँ गई?
12. विकास मनुष्य पर जाकर क्यों रुक गया? किसने इसे विराम दिया? क्या उसे विकास की कोई आवश्यकता नहीं है?

बौद्धिक व भाषा सम्बन्धी विकास

1. कहते हैं कि मानव ने धीरे-धीरे बुद्धि का विकास कर लिया, तब प्रश्न है कि बन्दर व अन्य प्राणियों में बौद्धिक विकास क्यों नहीं हुआ?

2. मानव के जन्म के समय इस धरती पर केवल पशु-पक्षी ही थे, तब उसने उनका ही व्यवहार क्यों नहीं सीखा? मानवीय व्यवहार का विकास कैसे हुआ? करोड़ों वनवासियों में अब तक विशेष बौद्धिक विकास क्यों नही हुआ?
3. गाय, भैंस, घोड़ा, भेड़, बकरी, ऊँट, हाथी करोडों वर्षों से मनुष्य के पालतू पशु रहे हैं पुनरपि उन्होंने न मानवीय भाषा सीखी और न मानवीय व्यवहार, तब मनुष्य में ही यह विकास कहाँ से हुआ?
4. दीपक से जलता पतंगा करोड़ों वर्षों में इतना भी बौद्धिक विकास नहीं कर सका कि स्वयं को जलने से रोक ले, और मानव बन्दर से इतना बुद्धिमान् बन गया कि मंगल की यात्रा करने को तैयार है? क्या इतना जानने की बुद्धि भी विकासवादियों में विकसित नहीं हुई? पहले सपेरा साँप को बीन बजाकर पकड़ लेता था और आज भी वैसा ही करता है परन्तु साँप में इतने ज्ञान का विकास भी नहीं हुआ कि वह सपेरे की पकड़ में नहीं आये।
5. पहले मनुष्य बल, स्मरण शक्ति एवं शारीरिक प्रतिरोधी क्षमता की दृष्टि से वर्तमान की अपेक्षा बहुत अधिक समृद्ध था, आज यह ह्रास क्यों हुआ, जबकि विकास होना चाहिए था?
6. संस्कृत भाषा, जो सर्वाधिक प्राचीन भाषा है, उसका व्याकरण वर्तमान विश्व की सभी भाषाओं की अपेक्षा अतीव समृद्ध व व्यवस्थित है, तब भाषा की दृष्टि से विकास के स्थान पर ह्रास क्यों हुआ?
7. प्राचीन ऋषियों के ग्रन्थों में भरे विज्ञान के सम्मुख वर्तमान विज्ञान अनेक दृष्टि से पीछे है, यह मैं अभी सिद्ध करने वाला हूँ, तब यह विज्ञान का ह्रास कैसे हुआ? पहले केवल अन्तः प्रज्ञा से सृष्टि का ज्ञान ऋषि कर लेते थे, तब आज वह ज्ञान अनेकों संसाधनों के द्वारा भी नहीं होता। यह उलटा क्रम कैसे हुआ?

भला विचारें कि यदि पशु-पक्षियों में बौद्धिक विकास हो जाता, तो एक भी पशु-पक्षी मनुष्य के वश में नहीं आता। यह कैसे अज्ञानता भरी सोच है, जो यह मानती है कि पशु-पक्षियों में बौद्धिक विकास नहीं होता परन्तु शारीरिक विकास होकर उन्हें मनुष्य में बदल देता है और मनुष्यों में शारीरिक विकास नहीं होकर केवल भाषा व बौद्धिक विकास ही होता है। इसका कारण क्या विकासवादी मुझे बताएँगे।

आज विकासवाद की भाषा बोलने वाले अथवा पौराणिक बन्धु श्री

हनुमान जी को बन्दर बताएँ, उन्हें वाल्मीकीय रामायण का गम्भीर ज्ञान नहीं है। वस्तुतः वानर, ऋक्ष, गृध, किन्नर, असुर, देव, नाग आदि मनुष्य जाति के ही नाना वर्ग थे। ऐतिहासिक ग्रन्थों में प्रक्षेपों (मिलावट) को पहचानना परिश्रम साध्य व बुद्धिगम्य कार्य है।

ऊधर जो प्रबुद्धजन किसी वैज्ञानिक पत्रिका में पेपर प्रकाशित होने को ही प्रामाणिकता की कसौटी मानते हैं, उनसे मेरा अति संक्षिप्त विनम्र निवेदन है–

1. बिग बैंग थ्योरी व इसके विरुद्ध अनादि ब्रह्माण्ड थ्योरी, दोनों ही पक्षों के पत्र इन पत्रिकाओं में छपते हैं, तब कौन सी थ्योरी को सत्य मानें?
2. ब्लैक होल व इसके विरुद्ध ब्लैक होल न होने की थ्योरीज् इन पत्रिकाओं में प्रकाशित हैं, तब किसे सत्य मानें?
3. ब्रह्माण्ड का प्रसार व इसके प्रसार न होने की थ्योरीज् दोनों ही प्रकाशित हैं, तब किसे सत्य मानें?

ऐसे अनेक उदाहरण दिए जा सकते हैं। इस कारण यह आवश्यक नहीं है कि हमें एक वर्ग विशेष से सत्यता का प्रमाण लेना अनिवार्य हो? हमारी वैदिक एवं भारतीय दृष्टि में उचित तर्क, पवित्र गम्भीर ऊहा एवं योगसाधना (व्यायाम नहीं) से प्राप्त निष्कर्ष वर्तमान संसाधनों के द्वारा किये गये प्रयोगों, प्रक्षेपणों व गणित से अधिक प्रामाणिक होते हैं। यदि प्रयोग, प्रेक्षण व गणित के साथ सुतर्क, ऊहा का साथ न हो, तो वैज्ञानिकों का सम्पूर्ण श्रम व्यर्थ हो सकता है। यही कारण है कि प्रयोग, परीक्षणों, प्रेक्षणों व गणित को आधार मानने वाले तथा इन संसाधनों पर प्रतिवर्ष खरबों डॉलर खर्च करने वाले विज्ञान के क्षेत्र में नाना विरोधी थ्योरीज् मनमाने ढंग से फूल-फल रही हैं और सभी अपने को ही सत्य कह रही हैं। यदि विज्ञान सर्वत्र गणित व प्रयोगों को आधार मानता है, तब क्या कोई विकासवाद पर गणित व प्रयोगों का आश्रय लेकर दिखाएगा?

इस कारण मेरा सम्मान के योग्य वैज्ञानिकों एवं देश व संसार के प्रबुद्ध जनों से अनुरोध है कि प्रत्येक प्राचीन ज्ञान का अन्धविरोध तथा वर्तमान पद्धति का अन्धानुकरण कर बौद्धिक दासत्व का परिचय न दें। तार्किक दृष्टि का सहारा लेकर ही सत्य का ग्रहण व असत्य का परित्याग करने का प्रयास करें। हाँ, अपने साम्प्रदायिक रूढ़िवाद सोच को विज्ञान के समक्ष खड़े करने का प्रयास करना अवश्य आपत्तिजनक है।

अन्य उपलब्ध साहित्य

भारतीय सांस्कृतिक चिंतन **प्रशांत वेदालंकार**

रु.3995.00 **पृष्ठ 784**

प्रस्तुत ग्रन्थ संकलन बीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध के सामाजिक राजनीतिक, शैक्षिक एवं धार्मिक स्थिति पर भारतीय परंपरा के परिप्रेक्ष्य में लेखक का विश्लेषण और दृष्टिकोण प्रस्तुत करता है। यह संकलन उन व्यक्तियों के लिए लाभकारी होगा ही जो किसी विषय पर भारतीय सांस्कृतिक दृष्टि जानना चाहते हैं यह उन जिज्ञासुओं के लिए उपयोगी है जो भारतीय संस्कृति को जीवन की बहुआयामी पृष्ठभूमि में समझना चाहते हैं। प्रस्तुत संकलन में सम्मिलित पुस्तकों के नाम निम्न हैं। अर्थात् इस पुस्तक के अन्दर निम्न सात पुस्तकें समाहित है।

वैदिक समाज व्यवस्था, राज्य व्यवस्था, वैदिक साहित्य में नारी, अयुर्वेद के ज्ञाता महर्षि दयानंद, भारत में शिक्षा, अशिक्षा, धर्म का स्वरूप, आपत्काल के उन्नीस महीने।

विद्यामार्तण्ड स्वामी दीक्षानंद सरस्वती का जीवनवृत

प्रेमलता भटनागर **रु.150.00** **पृष्ठ 225**

स्वामी दीक्षानंद सरस्वती जी सब कलाओं से परिपूर्ण आदित्य ब्रह्मचारी स्वामी दीक्षानंद थे। उनके जीवन से ही प्रेरणा मिलती है कि काश! मैं भी स्वामी जैसा आकर्षक चेहरा प्राप्त कर पाता। वह वैदिक विद्वान थे कर्मकाण्ड के पंडित, आद्यन्त कर्मरत रहते वीरता से मृत्यु का आलिंगन करने वाले अनोखे, पूर्ण रूप से अनूठे तथा वेद व्याख्याता थे।

वैदिक चिन्तन-प्रसून **डॉ. प्रेमचन्द्र श्रीधर सरस्वती**

रु.90.00 **पृष्ठ 187**

डॉ. श्रीधर आर्य समाज के उच्चकोटि के ओजस्वी एवं प्रखर वक्ता तथा वैदिक मनीषी हैं। केनिया, इंग्लैण्ड, कैनेडा और अब अमेरिका में जाकर आपने वैदिक धर्म की दुन्दुभि बजाई है। आर्य समाज के सन्देश का विदेशों में प्रचार करके अन्तर्राष्ट्रीय प्रचारक के रूप में ख्याति प्राप्त की। आपको आर्य समाज सान्तक्रुज, मुम्बई द्वारा 'श्री मेघजी भाई आर्य साहित्य पुरस्कार' के लिए 1999 में सम्मानित किया गया है। सरल भाषा में निबद्ध आपका साहित्य आबाल-वृद्ध सभी के लिए पठनीय है।

शंका समाधान **स्वामी मुनीश्वरानंद सरस्वती**

रु.100.00 **पृष्ठ 311**

प्रस्तुत पुस्तक में प्रश्नों का उत्तर देकर हवन होम इत्यादि में आने वाली समस्याओं का समाधान लेखक ने प्रस्तुत किया है। जैसे होम से मनुष्यों का क्या उपकार है। उत्तर–सब लोग जानते हैं कि दुर्गन्धुयुक्त वायु और जल से रोग, रोग से प्राणियों को दुख और सुगन्धित वायु तथा जल से आरोग्य की वृद्धि और रोग नष्ट होने का सुख प्राप्त होता है।

धर्मोपदेश मंजरी **डॉ विनोदचंद्र विद्यालंकार**

संकलनकर्ता श्री लब्भूराम नैययड़ **रु.50.00 पृष्ठ 304**

प्रस्तुत पुस्तक में महात्मा मुंशीराम तथा स्वामी श्रद्धानन्द की लेखनी से नि:सृत उपदेशों का संकलन है।

क्या है आपके जीवन की सच्चाई **लेखिका सुश्री कंचन आर्या**

रु.60.00 **पृष्ठ 192**

(जानिए एक माँ के पत्रों द्वारा) विद्यार्थी के लिए विशेष।

प्रस्तुत पुस्तक में संकलित सभी पत्र न केवल युवा पीढ़ी का बल्कि उनके माता–पिता का भी मार्गदर्शन करते हैं। इन पत्रों में जहाँ एक ओर हमारे समाज में पनपती कुरीतियों तथा युवा वर्ग की समस्याओं का विश्लेषण किया गया है, वहीं अध्यात्म तथा स्वास्थ्य जैसे विषयों के बारे में भी आवश्यक जानकारी दी गई है।

वैदिक चिन्तन धारा **रामनिवास गुणग्राहक**

रु.50.00 **पृष्ठ 112**

(विभिन्न विषयों के पर वैदिक दृष्टिकोण)

आर्य समाज जैकमपुरा गुडगांव के पुरोहित, तथा सच्ची पहचान आर्य समाज श्रीगंगानगर से मिली। ठेठ ग्रामीण परिवेश में पला–बढ़ा एक ऐसा किशोर जो अपने परिवार में ही नहीं कुटुम्ब में सर्वप्रथम मैट्रिक पास हुआ हो और उससे भी पहले काव्य रचना करने लगे तो इसकी जड़ वर्तमान जीवन में नहीं ढूँढी जा सकती। 1990 में इनकी काव्य रचनाएँ आर्य पत्रों में छपती रही हैं और इनकी इसी प्रवृत्ति ने इन्हें श्रीगंगानगर के दैनिक पत्रों और आकाशवाणी सूरतगढ़ से जोड़ दिया। 26 जनवरी 1995 को इनकी पहली रचना 'युवा पहचान' प्रकाशित हुई थी। 'वैदिक चिन्तन धारा' पुस्तक में लेखक ने निम्न विषयों पर प्रकाश डाला है, जैसे ईश्वर, धर्म, विज्ञान, संस्कृति पर्व, दयानंद: आर्यसमाज, राष्ट्र–समाज, खण्डन व अन्य, जैसे शराब से अधिक विनाशकारी पदार्थ कोई नहीं इत्यादि।

मई २०१८ Registered with Regn. of News Paper for India
वेदप्रकाश R.No. 627/57 Regd. No. DL(DG-11)/8030/2018-20, U(DGPO) 01/2018-20
Posted at Delhi RMS, Delhi-110006

अन्य उपलब्ध साहित्य

लौकिक-न्याय रत्न-माला **रचियता वैद्य रामस्वरूप शास्त्री**

रु.40.00 **पृष्ठ 71**

(Sanskrit Proverbs with English and Hindi equivalents)

जैसा कि लाखों संस्कृत प्रेमियों को ज्ञात होगा कि स्व. वैद्य रामस्वरूप शास्त्रीजी ने संस्कृति के प्रचार-प्रसार के लिए अपना पूरा जीवन समर्पित किया था और 'बालसंस्कृतम' मासिक पत्रिका 45 वर्ष तक निरंतर प्रकाशित कर छात्रोपयोगी विशाल संस्कृत साहित्य अकेले सृजन किया था। उनके महान कार्य को जीवंत रखने के उद्देश्य से शास्त्री जी के सुपुत्रों एवं उनके शिष्यों एवं शुभेच्छुओं ने इस ट्रस्ट की स्थापना की है। उनकी स्मृति में यह प्रथम पुष्प आपके लिए प्रस्तुत है।

योग रहस्य **महात्मा नारायण स्वामी**

रु.30.00 **पृष्ठ 116**

वर्ष 2005 ई. में आर्य समाज कोलकाता ने 'आर्य संसार' विशेषांक के रूप में महात्मा नारायण स्वामी लिखित 'योग रहस्य' पुस्तक का प्रकाशन किया था। इससे पूर्व 1971 में यह पुस्तक 'आर्य संसार' के विशेषांक के रूप में प्रकाशित हुई थी। ऐसी अच्छी पुस्तकों का पता-परिचय भी नयी पीढ़ी को कराना है और यह हमारी पीढ़ी का कर्तव्य है। योग के सम्बन्ध में जहाँ प्रचार बढ़ रहा है, वहीं भ्रम भी बढ़ रहा है। एक ओर योगासनों को ही योग की इतिश्री समझने वाले हैं, तो दूसरी ओर योग की उपलब्धियों और विभूतियों पर संदेह करने वालों की कमी नहीं है। पातजंल योग-दर्शन, राजयोग का सर्वमान्य ग्रन्थ है। उस पर सुबोध भाष्य के साथ उपोद्घात लिखकर महात्मा जी ने ग्रन्थ की उपयोगिता और बढ़ा दी है आशा है योग के जिज्ञासुओं को इससे अभीष्ट लाभ होगा।

प्राप्ति स्थानः विजयकुमार गोविन्दराम हासानन्द

4408, नई सड़क, दिल्ली-6, दूरभाष 23977216

Email: ajayarya16@gmail.com Web: www.vedicbooks.com